22

''परन्तु मैं तुम से कहता हूं''

(पहाड़ी उपदेश, 1)

बाइबल पाठ #8

V. दूसरे से तीसरे फसह तक (क्रमशः)।

च. पहाड़ी उपदेश।

1. प्रारम्भिक कथन (मत्ती 5:1, 2; लूका 6:17-20)।
2. धन्य वचन: मसीहा के लोगों के प्रतिज्ञाएं (मत्ती 5:3-12; लूका 6:20-26)।
3. मसीहा के लोगों का प्रभाव (और जिम्मेदारियां) (मत्ती 5:13-16)।
4. मसीहा की शिक्षा का पुराने नियम से और पुराने नियम की शिक्षा पर मनुष्यों द्वारा बनाई परम्पराओं से सम्बन्ध। (मत्ती 5:17-48; लूका 6:27-30, 32-36)।
5. धार्मिक कार्य अन्दर से हों, न कि दिखावे के लिए (मत्ती 6:1-18)।

परिचय

हमारे पिछले पाठ के अन्त में, यीशु ने अपनी मृत्यु के बाद अपने कार्य को जारी रखने वाले लोगों को चुना था। उन्हें तैयार करने का उसका पहला काम एक व्यापक संदेश देना था, जिसकी मसीहा के राज्य के लोगों को अपेक्षा होनी थी। इसे हम ''पहाड़ी उपदेश'' के रूप में जानते हैं।

बहुत से लोगों को इस अद्भुत संदेश को सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ था (मत्ती 5:1; 7:28; लूका 6:17; 7:1), परन्तु विशेष तौर पर यह यीशु के चेलों के लिए ही था (मत्ती 5:1, 2; लूका 6:20)। नव नियुक्त प्रेरितों के लिए हम इसे नये परिचय मान सकते हैं।

इस संदेश में, राज्य के लोग *बनने* के लिए आवश्यक व्यवहार पर ध्यान दिलाया गया है (देखें मत्ती 5:3-6; 6:33; 7:21, 24-27)। यद्यपि मुख्यतः यह इस बारे में है कि जो *पहले से* ही यीशु का अनुयायी है, उसका व्यवहार कैसा होना चाहिए।

इस उपदेश का अध्ययन करते समय, यह समझ लें कि यीशु यहूदी काल के दौरान यहूदी श्रोताओं को सम्बोधित कर रहा था। इसलिए उसने यहूदी सर्वोच्च न्यायालय (महासभा) (मत्ती 5:22), वेदी पर भेंट (मत्ती 5:23) और ''[परमेश्वर] का नगर'' के लिए यरूशलेम का नाम लिया (मत्ती 5:35)। परन्तु ये शब्द यीशु के नये नियम के भाग के रूप

में सज़्भालकर रखे गए हैं; सो इनकी प्रासंगिकता बनाने के लिए, हमें मसीही अवधारणाओं के लिए इन शज़्दों को अपनाना आवश्यक है। (उदाहरण के लिए, ''यदि तू अपनी भेंट वेदी पर लाए'' [मज़ी 5:23] से ''यदि तू परमेश्वर की आराधना करने के लिए आए'' वाला विचार ही मिलता है।)

इस उपदेश का प्रसिद्ध भाग मज़ी 5-7 अध्याय में, परन्तु एक संक्षिप्त भाग लूका 6:20-49 में मिलता है। दोनों वृज़ांतों में अन्तर हैं। उदाहरण के लिए, मज़ी में 107 आयतें हैं, जबकि लूका में 30 आयत हैं, और कहीं-कहीं इसमें शज़्दों का अन्तर भी है। मुझे इन अन्तरों से फर्क नहीं पड़ता। मज़ी विस्तृत अंक देता है जबकि लूका पाठ का संक्षिप्त अंक देता प्रतीत होता है[1]-और दोनों स्वतन्त्र गवाहों के शज़्दों में थोड़े-बहुत अन्तर की उज़्मीद की जानी आवश्यक भी है।[2] (बहुत से लोग इस बात से सहमत हैं कि मज़ी और लूका दोनों ही यीशु के कहे वचनों का सार देते हैं, न कि उसका कहा गया एक-एक शज़्द बताते हैं।[3])

अधिकतर छात्रों की सबसे बड़ी दिलचस्पी यह होती है कि मज़ी के अनुसार, सिखाने से पहले यीशु ''पहाड़ पर चढ़ गया'' और ''बैठ गया'' (मज़ी 5:1)। इसके विपरीत, लूका ने लिखा है कि सिखाने से पहले, यीशु ''चौरस जगह में खड़ा हुआ'' (लूका 6:17)। परन्तु दोनों को मिलाना असज़्भव नहीं है। हो सकता है कि पहले यीशु ने पहाड़ के नीचे चौरस जगह पर खड़े होकर भीड़ को चंगा किया हो (लूका 6:12, 17-19), और फिर वह कुछ दूरी पर पहाड़ पर चढ़कर अपने चेलों को सिखाने के लिए बैठ गया हो-लोग उससे इतनी दूरी पर होंगे, जहां से उसे आसानी से सुन सकते हों। जेरोम (एक आरज़्भिक मसीही लेखक) के अनुसार, उसके समय में यह सामान्य माना जाता था कि उपदेश हतीम के सींग[4] पर दिया गया था, जिसमें भीड़ के इकट्ठा होने के लिए एक चौरस जगह थी।

यह तथ्य कि मज़ी और लूका में यह उपदेश एक ही तरह से आरज़्भ होते (मज़ी 5:3-12; लूका 6:20-23), एक ही तरह से खत्म होते (मज़ी 7:24-27; लूका 6:47-49), और-बीच में एक ही सामान्य ढंग अपनाते हैं,[5] मुझे यह विश्वास दिलाता है कि दोनों उपदेश एक ही हैं। एक हैं या नहीं, इसका इतना महत्व नहीं है। यदि वे एक नहीं हैं, तो वे मूलत: एक ही सुनने वालों के लिए[6] एक समय में दिए गए एक जैसे संदेश हैं।[7] इस कारण, उनका अध्ययन इकट्ठे बैठकर किया जा सकता है-और यही हम करने जा रहे हैं।[8] ज़्योंकि मज़ी का वृज़ांत अधिक परिचित है और उसमें अधिक व्यापक ढंग से लिखा गया है, इसलिए हम अपने मूल स्रोत के रूप में इसी का और सहायक स्रोत के रूप में लूका के वृज़ांत का इस्तेमाल करेंगे।

हम इस उपदेश की सभी महान सच्चाइयों पर टिप्पणी या हर पहेलीनुमा वाज़्य का अर्थ बताने में सक्षम नहीं हैं। इस और अगले पाठ में, हम इस अद्वितीय प्रस्तुति के सज़्पूर्ण उद्देश्य को दिखाने का प्रयास करेंगे।

''धन्य हो तुम ...'' (मत्ती 5:3-12; लूका 6:20-26)

इस उपदेश का आरम्भ ''धन्य'' शब्द से शुरू होने वाले वाक्यों की शृंखला से होता है। इन्हें ''the Beatitudes'' अर्थात ''धन्य वचन'' कहा जाता है। यह शीर्षक बाइबल के लातीनी संस्करण से लिया गया है, जिसमें प्रत्येक वाक्य में पहला शब्द *beati* है, जो ''धन्य'' या ''प्रसन्न'' के लिए लातीनी शब्द है।

किसी के लिए भी जो पहाड़ी उपदेश को पढ़ता है, यह स्पष्ट है कि यीशु के पीछे चलना आसान नहीं है (मत्ती 5:10-12)। इसलिए मसीह ने प्रोत्साहित करने वाले शब्दों से शुरू किया कि लोग यदि उसके वचनों को सुनते और उन पर अमल करते हैं, तो वे किस प्रकार आशीष पा सकते हैं (देखें 7:24, 25)। विश्वासी चेले एक सीमा तक इस जीवन में इन आशिषों का आनन्द उठाएंगे, परन्तु पूर्ण रूप से उन्हें यह आनन्द इसके बाद वाले जीवन में ही मिलेगा। लूका का वृत्तांत यीशु के आगे समर्पित न होने वाले लोगों पर पड़ने वाली *हाय* को शामिल करता है (लूका 6:24-26[9])।

''तुम ... हो'' (मत्ती 5:13-16)

धन्य वचनों से इस बात को आधार मिला कि यीशु के पीछे चलने से उसके अनुयायियों को आशिषें मिलेंगी। फिर मसीह ने घोषणा की कि उसकी इच्छा पूरी करने से दूसरों को भी आशीष मिलेगी-जब उसने अपने चेलों से ''पृथ्वी के नमक'' और ''जगत की ज्योति'' बनने के लिए कहा। बाइबल के कई पद प्रभाव की सामर्थ तथा महत्व के बारे में सिखाते हैं (उदाहरण के लिए, नीतिवचन 27:17; होशे 4:9; 1 कुरिन्थियों 5:6; 15:33; फिलिप्पियों 2:15; 1 पतरस 2:12), परन्तु मत्ती 5:13-16 से अधिक चुनौतीपूर्ण और विचारोत्तेजक और कोई नहीं है।[10]

''तुम सुन चुके हो ...'' (मत्ती 5:17-48; लूका 6:27-30, 32-36)

पहाड़ी उपदेश का सबसे लम्बा भाग मत्ती 5:17-48 है, जो यीशु की शिक्षा से मूसा की व्यवस्था तथा मनुष्य की बनाई हुई परम्परा को अलग करता है। यह आवश्यक था कि मसीह के चेलों को व्यवस्था तथा व्यवस्था में जोड़ी गई मनुष्य की कई परम्पराओं से उसके सम्बन्ध की स्पष्ट समझ हो।

आरम्भिक वाक्य महत्वपूर्ण है। यीशु ने आरम्भ में कहा:

> यह न समझो कि मैं व्यवस्था या भविष्यवक्ताओं की पुस्तकों को लोप करने आया हूं। लोप करने नहीं, परन्तु पूरा करने आया हूं। क्योंकि मैं तुमसे सच कहता हूं, कि जब तक आकाश और पृथ्वी टल न जाएं, तब तक व्यवस्था से एक मात्रा या एक बिन्दु भी बिना पूरा हुआ नहीं टलेगा (मत्ती 5:17, 18)।

इस तथ्य से कि यीशु व्यवस्था को ''लोप करने'' नहीं ''परन्तु पूरा करने'' आया, कई

लोग यह सोचते हैं कि हम आज भी पुरानी व्यवस्था के अधीन हैं। मसीह के शब्दों की यह व्याख्या उसे अपने प्रेरितों को दी गई अपनी ही स्पष्ट शिक्षा का विरोधी बना देगी। पौलुस ने यीशु के बारे में लिखा कि उसने ''अपने शरीर में बैर अर्थात वह व्यवस्था, जिसकी आज्ञाएं विधियों की रीति पर थीं, मिटा दिया, कि दोनों [अर्थात यहूदियों और अन्यजातियों] से अपने में एक नया मनुष्य उत्पन्न करके मेल करा दे'' (इफिसियों 2:15)। इस प्रेरित ने व्यवस्था के ''नियमों'' के बारे में कहा कि यीशु ने विधियों का लेख ''क्रूस पर कीलों से जड़कर'' बीच में से हटा दिया है (कुलुस्सियों 2:14, 16)।

मत्ती 5:17, 18 में मसीह के शब्दों को यह विचार करते हुए समझा जा सकता है कि पुराना नियम एक वाचा अर्थात परमेश्वर और यहूदियों के बीच एक समझौता था (देखें व्यवस्थाविवरण 4:13; 5:2, 3)।[11] पुराने नियम को परमेश्वर और इस्राएलियों के बीच एक *अनुबंध* के रूप में मानें। यीशु उस अनुबंध को ''लोप'' करने (फैंकने या नष्ट करने) नहीं, बल्कि ''पूरा करने'' आया था। अपने जीवन, मृत्यु तथा पुनरुत्थान के द्वारा उसने यही किया। विल एड वारेन ने लिखा है, ''उसने इसकी भविष्यवाणियों को पूरा किया, उसने व्यवस्था की आज्ञाओं को पूरा किया और व्यवस्था के उद्देश्यों को पूरा किया (गलातियों 3:19; 5:14)।''[12]

वाचा/अनुबन्ध पूरा हो जाने के बाद फिर से नहीं बनाया जाता। उदाहरण के लिए, का टुकड़ा ही ले लें। सभी शर्तों को पूरा करके उस वाचा को पूरा करने के बाद (जिसमें सब तरह के भुगतान आदि शामिल हैं), यह एक *पूरी हुई* वाचा है; अब कोई इसके अधीन नहीं है। इसी प्रकार जब यीशु ने व्यवस्था को पूरा कर दिया, तो लोगों पर से इसका अधिकार खत्म हो गया (देखें गलातियों 3:16, 19, 24, 25)।

परन्तु पहाड़ पर यीशु के प्रचार के समय, व्यवस्था प्रभावी थी। जब तक व्यवस्था प्रभावी थी, मसीह अपने चेलों को इसकी बातों का सम्मान करने की शिक्षा देता था (मत्ती 5:19, 20)। उसकी आपत्ति व्यवस्था पर नहीं, बल्कि यहूदियों द्वारा की गई व्यवस्था की व्याख्या पर थी।

अगली आयतों में, यीशु ने उन आज्ञाओं को मानने के लिए आवश्यक मन का व्यवहार शामिल करने के लिए व्यवस्था की कई आज्ञाओं को विस्तार दिया। उसने शास्त्रियों और फरीसियों द्वारा सिखाए गए ढंग से अलग ढंग सिखाया।

हत्या-और क्रोध (मत्ती 5:21-26)

दस आज्ञाओं में, छठी आज्ञा थी, ''तू खून न करना'' (निर्गमन 20:13; व्यवस्थाविवरण 5:17)। मूल शर्त नई वाचा में मिला दी गई है (रोमियों 13:9), परन्तु यीशु ने हत्या के *उद्देश्य* और हत्या करने के लिए उकसाने वाली परिस्थितियों के विरुद्ध चेतावनी शामिल करते हुए मूल आज्ञा को विस्तार दे दिया (मत्ती 5:22)। उसने उन सब को, जो दूसरों से सहमत नहीं हैं, अपने मतभेद तुरन्त मिटाने के लिए कहा (आयतें 23-26)।

व्यभिचार-और वासना (मत्ती 5:27-30)

डैकालॉग[13] की सातवीं आज्ञा थी, ''तू व्यभिचार न करना'' (निर्गमन 20:14; व्यवस्थाविवरण 5:18)। यह शिक्षा भी नये नियम का भाग है (रोमियों 13:9), परन्तु मसीह ने इसे उकसाने वाली बात, जो कि यहां वासना है, की आज्ञा को फिर से विस्तार दिया (मत्ती 5:28)। उसने अपने अनुयायियों को अपने जीवनों से ऐसी किसी भी चीज़ को ''निकालकर अपने पास से फैंक'' देने के लिए कहा, जो मना की गई इच्छा को बढ़ावा देती है (आयतें 29, 30)।[14]

तलाक-और कारण (मत्ती 5:31, 32)

तलाक के विषय पर, व्यभिचार के बारे में यीशु को और भी कहना था।[15] उसने ''त्यागपत्री'' अर्थात तलाकनामा देने के बारे में व्यवस्थाविवरण 24:1-4 से एक आज्ञा उद्धृत की, जो नये नियम में शामिल *नहीं* की गई। कुछ शास्त्री व्यवस्थाविवरण 24:1-4 की व्याख्या तलाक को ''हर एक कारण से'' (मत्ती 19:3) उचित ठहराने के लिए करते थे, परन्तु यीशु ने कहा कि पवित्र शास्त्र के अनुसार तलाक का एकमात्र कारण पति या पत्नी दोनों में से किसी एक की ओर से दूसरे के साथ बेवफ़ाई या विश्वासघात होना चाहिए (आयत 32)।[16]

शपथें-और निष्ठा (मत्ती 5:33-37)

अगला अन्तर गम्भीरतापूर्वक शपथें खाने के बारे में था। आयत 33 में यीशु की बात से यह पता चला कि यहूदी शिक्षकों ने लैव्यव्यवस्था 19:12; गिनती 30:2; और व्यवस्थाविवरण 23:21, 23 जैसे पदों का ग़लत अर्थ निकाला था। यहूदी लोग कुछ शपथें खाने की अनुमति देते थे, जबकि कुछ शपथें खाने को मना करते थे, परन्तु यीशु ने केवल यह कहा कि ''कभी शपथ न खाना'' (मत्ती 5:34; देखें याकूब 5:12)।[17] मसीह के चेलों की बातें सच से इतनी मेल खाती होनी चाहिए कि दूसरों को उनकी बात का विश्वास दिलाने के लिए शपथ खाने की ज़रूरत ही न पड़े।

बदला लेना-और विरोध न करना (मत्ती 5:38-42; लूका 6:29, 30, 34)

जो कुछ अब तक यीशु ने कहा था, यदि उसके सुनने वाले ध्यान से सुन रहे थे तो वे अवश्य चकित हुए होंगे। यदि ऐसा था, तो उसके अन्तिम दो अन्तरों से वे चौंक गए होंगे।

अगला अन्तर निर्गमन 21:24, लैव्यव्यवस्था 24:20 और व्यवस्थाविवरण 19:21 में पाए जाने वाले ''आंख के बदले आंख, और दांत के बदले दांत'' के सिद्धान्त के सम्बन्ध में था (मत्ती 5:38)। पुराने नियम का यह निर्देश मुख्यत: आधिकारिक न्याय करने वालों के लिए था; इसका एक उद्देश्य दण्ड को खत्म करने से बचाने के लिए था। दुख की बात है कि यहूदियों ने इस शिक्षा को व्यक्तिगत बदला लेने के लिए न्यायोचित ठहराने के लिए बना दिया था।[18]

यीशु ने बदला लेने और निजी बदला लेने के विरोध में सिखाया। उसने अपने अनुयायियों को दूसरों के साथ ''दो कोस चला जाने'' की (देखें मत्ती 5:41), और आवश्यकता पड़ने पर दुर्व्यवहार सहने को तैयार रहने की भी आज्ञा दी (मत्ती 5:39-42;[19] देखें 1 कुरिन्थियों 6:7)।

शत्रु-और प्रेम (मत्ती 5:43-48; लूका 6:27, 28, 33, 34, 36)

फिर, यीशु ने शत्रुओं के साथ व्यवहार पर बात की। इस और पिछले अन्तर में काफ़ी निकट सम्बन्ध है।[20]

व्यवस्था में आज्ञा थी, ''एक-दूसरे से अपने ही समान प्रेम रखना'' (लैव्यव्यवस्था 19:18)। यहूदी शिक्षकों ने इसका अर्थ अपने ''पड़ोसी'' से प्रेम रखना और शत्रु से घृणा करना निकाल लिया था (मत्ती 5:43)-यह जोड़ी गई ऐसी बात थी, जो पुराने नियम में *नहीं* मिलती।[21]

यीशु ने पड़ोसी से प्रेम करने की बात का समर्थन किया और इसे अपनी नई वाचा में शामिल किया (मत्ती 22:39; रोमियों 13:8-10; गलातियों 5:14; याकूब 2:8)। परन्तु शत्रुओं से घृणा करने के ढंग का ज़ोरदार खण्डन किया। उसने अपने चेलों से अपने शत्रुओं के लिए प्रेम रखने और प्रार्थना करने, सभी की आवश्यकताओं का वैसे ही ध्यान रखने के लिए सिखाया जैसे परमेश्वर रखता है (मत्ती 5:44-48)।[22]

''परन्तु जब तू ...'' (मत्ती 6:1-18)

पिछले भाग में, यीशु ने अपने सुनने वालों को समझाया था कि उनकी धार्मिकता ''शास्त्रियों और फरीसियों की धार्मिकता'' से बढ़कर होनी आवश्यक है (मत्ती 5:20)। बहुत से शास्त्रियों और फरीसियों की एक कमज़ोरी यह थी कि उनके धर्म के काम परमेश्वर से प्रशंसा पाने के बजाय लोगों से प्रशंसा पाने के लिए होते थे। इसलिए यीशु ने परमेश्वर की बात मानने की सही प्रेरणा के महत्व पर ज़ोर दिया: ''सावधान रहो! तुम मनुष्यों को दिखाने के लिए अपने धर्म के काम[23] न करो, नहीं तो अपने स्वर्गीय पिता से कुछ भी फल न पाओगे'' (6:1)। फिर यीशु ने इसका अर्थ समझाने के लिए तीन उदाहरण दिए।

दान देना (आयतें 2-4)

पहले यीशु ने दान देने के यहूदी ढंग की बात की। यूनानी के अनुवादित शब्द ''दान'' का मूल अर्थ ''दया का काम'' है। हिन्दी में ''दान'' निर्धनों को दिए गए दान को कहा जाता है। पुराने नियम में सिखाया जाता था कि निर्धनों को देना एक पवित्र ड्यूटी है (व्यवस्थाविवरण 15:11), परन्तु कुछ यहूदियों ने अपने दान को ही फल बना लिया था (मत्ती 6:2)। यीशु ने अपने अनुयायियों से आग्रह किया कि वे लोगों को दिखाने के लिए नहीं, बल्कि गुप्त रूप से यह काम करें (आयतें 3, 4)।

कुछ लोगों ने ''दाहिने हाथ'' और ''बायें हाथ'' (आयत 3) के साथ ''गुप्त'' (आयत 4) का अर्थ यह लगा लिया है कि मसीही लोगों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके दान के बारे में किसी को पता न चले। इस प्रकार देखने से यह पद ''तुम्हारा उजियाला मनुष्यों के सामने चमके'' ताकि वे हमारे भले कामों को *देख* सकें (देखें 5:16) की यीशु की पिछली शिक्षा के विपरीत लगेगा।[24] मेरा मानना है कि जे. डब्ल्यू. मैक्गर्वे सही था, जब उसने लिखा, ''यह आज्ञा प्रसिद्धि से नहीं, परन्तु उस सोच से मना करती है जो प्रसिद्धि की *इच्छा करती है*।''[25]

प्रार्थना करना (आयतें 7-15)

यीशु का दूसरा उदाहरण प्रार्थना करने के बारे में था। उसने कपटियों की अपनी प्रार्थनाएं लोगों को दिखाने के लिए करने पर निन्दा की और अपने चेलों से अकेले में, व्यक्तिगत प्रार्थनाएं करने की आदत डालने का आग्रह किया (6:5, 6)।

प्रार्थना के विषय में बात करते हुए, यीशु ने और अवलोकन भी जोड़ दिए: उसने ''बक-बक'' (आयत 7) के ढंग की निन्दा की और अपने सुनने वालों को प्रार्थना का एक नमूना दिया (आयतें 9-13)।[26] नमूने की या आदर्श प्रार्थना में क्षमा के बारे में एक पंक्ति थी, जिससे दूसरों को क्षमा करने की आवश्यकता के बारे में मसीह ने विचारणीय बातें कहीं (आयतें 14, 15)।

उपवास (आयतें 16-18)

तीसरा उदाहरण उपवास का था। पुराने नियम में उपवास की कोई विशेष आज्ञा नहीं थी, परन्तु व्यवस्था में यहूदियों को प्रायश्चित के दिन अपने प्राणों को ''दीन'' करने को कहा गया था (लैव्यव्यवस्था 16:29, 31), और इसके लिए उपवास अच्छा ढंग था (भजन संहिता 35:13)। बाद में, उपवास कौमी विपत्तियों को याद करने के लिए ठहराए गए थे (जकर्याह 8:19)। यीशु के समय में, फरीसी सप्ताह में दो बार उपवास रखते थे (लूका 18:12)। उस ज़माने, वे यह सुनिश्चित करते थे कि सब को पता चल जाए कि उन्होंने अपने आप को ''दुखी किया'' है। यीशु ने वास्तव में अपने सुनने वालों से कहा कि ''यदि और जब तुम उपवास रखो, तो यह अपने तक ही हो'' (आयतें 16-18)।

सारांश

पहाड़ी उपदेश आज भी एक चुनौती है, परन्तु हम जो इसकी शिक्षाओं से परिचित हैं, इसके शब्दों के प्रभाव को उतनी अच्छी तरह से नहीं समझ सकते, जितना वे समझ सकते थे, जिन्होंने इसे पहली बार सुना था। शब्द की किसी भी परिभाषा से, यह उपदेश क्रांतिकारी था। यदि सारी नहीं तो इसकी अधिकतर शिक्षाएं यीशु के सुनने वालों ने अपने जीवन में सुनी हुई थीं। यीशु की शिक्षा *आज भी* उन अवधारणाओं के विपरीत जाती है, जिन्हें संसार प्रिय जानता है।

अगले पाठ में, हम इस उपदेश पर अपनी संक्षिप्त समीक्षा को समाप्त करेंगे–परन्तु तब तक अपने जीवन में इसकी सच्चाइयों को लागू करने की प्रतीक्षा न करें। ये सच्चाइयां विशेष तौर पर उन लोगों के लिए, जो उस समय यीशु के चेले थे (मत्ती 5:1, 2) और उसके साथ उस समय उपस्थित भीड़ के लिए भी थीं (मत्ती 7:28) परन्तु वे हम सबके लिए भी सम्भालकर रखी गईं। मसीह ने कहा, ''इसलिए *जो कोई* मेरी ये बातें सुनकर उन्हें मानता है, वह उस बुद्धिमान मनुष्य की नाईं ठहरेगा, जिसने अपना घर चट्टान पर बनाया'' (मत्ती 7:24)। इस अध्ययन में, आप उसकी बातों को ''सुन रहे'' हैं। क्या आपने उन पर अमल करना शुरू कर दिया है?

टिप्पणियां

[1]प्रत्येक लेखक ने परमेश्वर की प्रेरणा से मिले अपने उद्देश्यों के अनुकूल इस उपदेश के भाग को प्रस्तुत किया। छह को छोड़कर मत्ती के वृत्तांत की बाकी सब आयतें लूका की पुस्तक में कहीं न कहीं मिल जाती हैं। [2]अधिकतर प्रचारकों को कुछ अलग शब्दों से उपदेश को दोहराने की आदत है, ताकि वे इस पर ज़ोर दे सकें। जहां मत्ती और लूका में भिन्नता है, वहां हो सकता है कि मत्ती यीशु की एक समय की बात को लिख रहा हो, जबकि लूका किसी दूसरे समय की (उसी उपदेश में) जब यीशु ने वही बात की। [3]जैसा कि पहले ही कहा गया है, मत्ती ने कुछ ऐसी आयतें जोड़ी हैं, जो लूका में नहीं मिलती। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि लूका के वृत्तांत में सात आयतें ही ऐसी हैं, जो मत्ती के वृत्तांत में नहीं मिलतीं। [4]बुलाहट वाले पाठ में ''गलील की झील'' का मानचित्र देखें। [5]बाइबल पाठ की रूपरेखा 8 और 9 देखें। [6]उपदेश के थोड़ी देर बाद, दोनों वृत्तांतों में यीशु ने कफ़रनहूम के एक सूबेदार के सेवक को चंगा किया (मत्ती 8:5–13; लूका 7:1–10)। [7]मत्ती 5:1; 8:1, 5 की तुलना लूका 6:17, 20; 7:1 से करें। [8]अपने निजी अध्ययन में, आपको इस उपदेश के दोनों संस्करणों की तुलना सावधानी से करनी चाहिए: वे दोनों एक जैसे कैसे हैं? उनमें अन्तर कैसे है? विशेषकर उन कुछ घटनाओं पर ध्यान दें, जब लूका की पुस्तक में वह सामग्री मिलती है, जो मत्ती में नहीं है। [9]धन्य वचनों के मत्ती के संस्करण और लूका के वृत्तांत की तुलना से यह संकेत मिलेगा कि लूका के ''निर्धन'' और ''धनी'' के हवाले मुख्यतया आत्मिक स्थिति के बारे में हैं, न कि आर्थिक स्थिति के बारे में। [10]मत्ती 5:13–16 पर विस्तृत अध्ययन के लिए, इस पुस्तक में आगे ''तुम अपनी कीमत नहीं जानते'' और ''तुम्हारा उजियाला चमके'' पाठ देखें।

[11]वाचाओं पर और जानकारी के लिए ''उद्धार को समझना'' पुस्तक में ''अधिकार'' शीर्षक से पाठ देखें। [12]विल एड वारेन, जूलास सिलेबस, *द लाइफ़ ऑफ़ क्राइस्ट: द सिनोप्टिक गॉस्पल्स* हार्डिंग यूनिवर्सिटी, 1991, 1926. [13]''डैकालॉग'' दो यूनानी शब्दों *डैका* (''दस'') और *लोगोस* (''शब्द'') से लिया गया है। इसका अर्थ ''दस शब्द या बातें'' हैं और इसे दस आज्ञाओं के लिए इस्तेमाल किया जाता है। [14]मत्ती 5:29, 30 में यीशु शरीर को विकलांग करने के लिए नहीं कह रहा था; ऐसा कार्य देह को परमेश्वर के मन्दिर के रूप में मानने की बाइबल की शिक्षा का विरोध होगा (1 कुरिन्थियों 6:19; 3:17)। शरीर के अंगों को काट डालने से मन की स्थिति नहीं बदलेगी (मत्ती 15:19)। यीशु अपनी बात समझाने के लिए अतिश्योक्ति (अत्युक्ति) का इस्तेमाल कर रहा था। [15]मत्ती 5:31, 32 को पिछली तीन आयतों के साथ शामिल किया जा सकता है (और शायद करना भी चाहिए)। मैंने इन आयतों की सूची अलग से दी है, क्योंकि आयत 32 में ''परन्तु मैं तुम से यह कहता हूं'' वाक्यांश है। [16]मत्ती 19:3–9 में इस विषय को विस्तार दिया गया है, जिस पर अगले एक भाग में चर्चा की जाएगी। [17]इससे सरकारी शपथ खाना बन्द नहीं हुआ। महासभा द्वारा मुकदमा चलाए जाने के समय, यीशु ने शपथ का ही उज़र दिया था (मत्ती 26:63, 64)। [18]दुख की बात है

कि आज भी कुछ लोग निजी बदला लेने के लिए पुराने नियम की शिक्षा के इस्तेमाल को सही ठहराने की कोशिश करते हैं। [19]39 से 42 आयतें पहाड़ी उपदेश की सबसे चुनौतीपूर्ण आयतों में से हैं। यीशु का अपने जीवन की परीक्षा देना इसमें पाए जाने वाले सिद्धान्त का सबसे अच्छा उदाहरण है। निश्चय ही, कुछ योग्यता होनी आवश्यक है: बुराई का बिल्कुल विरोध न करना गलती करने को प्रोत्साहित करेगा। परन्तु ध्यान रखें कि इस पद का इस शिक्षा की कठोर प्रकृति को नरम करने के लिए इस्तेमाल न किया जाए। [20]लूका का वृज़ांत दो भागों को मिला देता है (लूका 6:27-30, 32-36)।

[21]पुराने नियम में इस्राएलियों के शत्रुओं को परमेश्वर के लोगों के साथ व्यवहार के लिए दण्ड देने की आज्ञा थी (उदाहरण के लिए, देखें व्यवस्थाविवरण 23:3-6), परन्तु इसमें यह शिक्षा नहीं थी कि यहूदी लोग अपने शत्रुओं से घृणा करें। उन्हें ''बुराई से घृणा'' करने के लिए कहा गया था (भजन संहिता 97:10; नीतिवचन 8:13), लोगों से नहीं। [22]''सिद्ध बनो'' जैसा परमेश्वर ''सिद्ध है'' की चुनौती (मज़ी 5:48) से कइयों को परेशानी होती है, ज़्योंकि हम में से कोई भी पाप रहित होने के अर्थ में सिद्ध नहीं हो सकता (रोमियों 3:23)। लूका के वृज़ांत में हमें ''दयावंत बनो'' की शिक्षा दी गई है जैसा परमेश्वर ''दयावंत है'' (लूका 6:36)। शिक्षा यह है कि *दया* के मामले में हम वैसे ही ''सिद्ध बनें'' जैसा परमेश्वर है–*जिसमें* धर्मियों और अधर्मियों दोनों पर हम दया दिखाते हैं (मज़ी 5:45)। [23][हिन्दी और–अनुवादक] KJV में मज़ी 6:1 में ''धर्म के काम ... करो'' है, परन्तु और अच्छे हस्तलेखों में सामान्य वाज़्यांश ''धार्मिकता के काम ... करो'' है। आयत 1 सामान्य उपदेश देती है; फिर अगली आयतें उस चेतावनी या उपदेश को समझाती हैं। [24]दिखाई देने वाले (मज़ी 5:16) और *दिखावा* करने के लिए किए जाने वाले काम में अन्तर है (देखें 6:2, 5, 16)। [25]जे. डज़्ल्यू मैज़्गर्वे और फिलिप्प वाई. पैंडलटन, *द फ़ोरफ़ोल्ड गॉस्पल ऑर ए हारमनी ऑफ़ द फ़ोर गॉस्पल्स* (सिंसिनटी: स्टैण्डर्ड पज़्लिशिंग कं., 1914), 251. [26]इस तथ्य के बावजूद कि जहां तक हमारी जानकारी है, यीशु ने वास्तव में कभी यह प्रार्थना नहीं की, आम तौर पर इस प्रार्थना को ''प्रभु की प्रार्थना'' कहा जाता है। इस प्रार्थना के लिए बेहतर शज़्द ''नमूने की प्रार्थना'' है। इस प्रार्थना का अधिकांश भाग एक और अवसर पर दोहराया गया था (लूका 11:2-4)। किसी भी अवसर पर यीशु द्वारा सार्वजनिक आराधनाओं में रट कर दोहराने के लिए यह प्रार्थना नहीं दी गई थी। प्रार्थना कहने से ''बक बक'' पर यीशु की शिक्षा का उल्लंघन होगा (मज़ी 6:7)। यदि आज किसी स्थिति में इस प्रार्थना का इस्तेमाल किया जाता है, तो इसमें एक वाज़्यांश बदला जाना आवश्यक है। हम यह प्रार्थना नहीं कर सकते कि ''तेरा राज्य आए'' (आयत 10), ज़्योंकि राज्य/कलीसिया तो आ चुका है। (मरकुस 9:1 और प्रेरितों 1:8 में यीशु की प्रतिज्ञा और प्रेरितों 2:1-4 में इसके पूरा होने पर ध्यान दें।) इस प्रार्थना के विस्तृत अध्ययन के लिए ''मसीह का जीवन, भाग 7'' में ''आदर्श प्रार्थना'' देखें।